- दूसरा अध्याय -

'पोस्टर' नाटक में चित्रित समस्याएँ

दूसरा अध्याय

'पोस्टर' नाटक में चित्रित समस्याएँ

पृष्ठभूमि :

समस्या नाटक की शुरुआत सबसे प्रथम योरोप में १९ वी सदी के उतरार्ध में हुअी। भावुकता एवं आदर्शवादिता के विरोध में यह नाटयप्रणाली वहाँ धीरे-धीरे विकसित हुअी। इब्सेन एवं शॉ इस नाटय-प्रणाली के प्रमुख नाटककार रहे। २० वी सदी में आकर इस पाश्चात्य समस्या नाटयप्रणाली ने भारतीय हिंदी नाटककारों को प्रभावित किया। प्रसाद युग तक भारतीय नाटक केवल स्वर्णमयी अतीत में ही रममाण था। उसमें वर्तमान जीवन के संघर्ष का अभाव था। केवल निरी भावुकता एवं कल्पनारम्यता युक्त नाटक भारतीय जीवन की वर्तमान समस्याओं को नहीं सुलझा सकते थे। अत: आधुनिक हिंदी नाटककार इस नवीन नाट्यप्रणाली से सर्वथा प्रभावित रहे। इस संदर्भ में डा. श्रीपति त्रिपाठीजी का कथन दृष्टव्य है, " .... हिंदी के नाटकों पर इन विचार प्रधान समस्या नाटकों का पूर्ण प्रभाव पडा। फलत: पाश्चात्य समस्या नाटकों की रचना पध्दति की सभी विशेषताएँ हिंदी नाटककारों द्वारा गृहीत हुई। जिसप्रकार शैक्सपियर के स्वच्छंदतावादी नाटकों की प्रतिक्रिया स्वरूप योरोप में इब्सेन तथा शॉ के विचार प्रधान यथार्थवादी नाटकों का विकास हुआ उसी प्रकार हिंदी में प्रसाद तथा द्विजेन्द्रलाल राय के रोमान्टिक तथा स्वच्छंदतावादी, प्रेम तथा भावुकता से लदे नाटकों के विरोध में लक्ष्मीनारायण मिश्र के समस्या नाटकों का प्रादुर्भाव हुआ।"[१] स्पष्ट है, कि पाश्चात्य विचारप्रधान समस्या नाटकों का अनुकरण हिंदी नाट्यसाहित्य में होता रहा। योरोप की तरह हिंदी में भी स्वच्छंदतावादी भावुकताप्रधान नाटकों के विरोध में यथार्थवादी समस्या प्रधान नाटक लिखे जाते रहे। अत: इन नाटककारों ने भावुकता प्रधान स्वप्नील अतीत को त्यागकर यथार्थ समस्याओं को अपने नाटकों

का वर्ज्य विषय बनाया। समाज की, व्यक्ति की , यथार्थ समस्याओं की ओर पाठक का ध्यान आकृष्ठ कर, उसे बौद्धिक धरातल पर झुलझाने की कोशिश आधुनिक नाटकों द्वारा की जाने लगी।

स्वतंत्रता के पश्चात बदलते सामाजिक, राजनीतिक, अर्थिक, पारिवारिक मूल्यों को ये नाटक सूक्ष्मता से अभिव्यक्त करते रहें। अत: इन नाटकों की कथावस्तु नितांत समसामयिक रही। यथार्थ समस्याओं के स्वाभाविक अंकन के लिए नाटक में रंगमंच की परम्परागत शैली त्याग दी गयी और यथार्थ-वादी शैली का आग्रह होने लगा। अर्थात स्वगतकथन, गीत-नृत्य-योजना लम्बे संवाद, स्वप्नील भावुकता आदि त्यागकर सरल दृश्यविधान एवं यथार्थ प्रस्तुति-करण की ओर नाटककारों का झुकाव रहा। रंगमंचीय सफलता के लिए विविध वैज्ञानिक उपकरणों का भी सफल प्रयोग हुआ। जैसे - ध्वनियंत्र, रेडियो बिजली आदि के प्रयोग से नाटकीय प्रयोग में सुगमता आयी। डा.लक्ष्मीनारायण लाल, उपेंद्रनाथ अश्क, सेठ गोविंददास, पृथ्वीनाथ शर्मा, भुवनेश्वर आदि नाटककारों ने इस नवीन नाट्यविधा का सफल प्रयोग किया है। अत: विभिन्न विषयों को लेकर विभिन्न वर्गों के समस्या नाटक लिखे जाते रहे।

समस्या नाटकों में आधुनिक यथार्थवादी नाट्यधारा की एक महत्वपूर्ण शैली भी विकसित होती रही है। एलबर्ट ग्यूरार्ड समस्या नाटक के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए उसकी परिभाषा इसप्रकार करते है, "..... समस्या नाटक वह नाटक है, जिसमें यथार्थवादी नाट्यशिल्प के द्वारा समसामयिक जीवन के प्रश्नों को प्रस्तुत किया जाता है।"[२] अर्थात समस्या नाटक में रंगमंच की यथार्थवादी शैली एवं समसामयिक कथावस्तु इन दोनों ही तत्वों का अंतर्भाव रहता है। इन दोनों में से किसी एक की स्वीकृति और दूसरे की कमी से समस्या नाटक का नाट्यबंध अधूरा रहता है। समस्या नाटक के लिए इन दोनों ही तत्वों की आवश्यकता रहती है। समसामयिक विषयवस्तु से मतलब, सर्वसामान्य वर्ग-जीवन की वर्तमान समस्याओं की यथार्थ प्रस्तुति है, जिसमें युगजीवन की चेतना अपने स्वाभाविक रूप में अभिव्यक्त होती है।

13134
A

अर्थात समस्या नाटक अपने युगजीवन का प्रतिबिंब रहता है। वर्तमान जीवन की समस्यामूलक स्थिति अभिव्यक्त करने के लिए ही समस्या नाटक में प्राचीन नाट्यशिल्प को त्यागकर यथार्थवादी शैली का प्रयोग किया जाता है, जिससे वर्तमान जीवन की स्वाभाविक एवं सजीव प्रस्तुति हो। इसमें नाटककार की यही कोशिश बनी रहती है, कि दर्शक अपने समसामयिक राजकीय, सामाजिक, पारिवारिक समस्याओं के प्रति सजग होकर उनके उपाय के लिए चिंतनशील बने, कृतिशील बने।

यद्यपि हिंदी में समस्या नाटकों की निर्मिति भारतेंदु काल से ही होती रही है, किंतु समस्या नाटक का सही सूत्रपात २० वीं सदी में ही हुआ। प्रसाद युग के कुछ नाटकों का कथ्य यद्यपि समकालीन था, किंतु उनकी मंचीय शैली प्राचीन, आदर्शवादी रही। अतः इस समय के नाटक केवल सामाजिक नाटक रहे। समस्या नाटक का सही रूप डा. लक्ष्मीनारायण मिश्र के नाटकों में दृष्टिगोचर होता है। समसामयिक यथार्थवादी कथ्य, बौद्धिक धरातल पर वर्तमान समस्या एवं संघर्ष की प्रस्तुति, व्यंग्य की तीव्रता, अनिश्चयात्मक स्थिति में नाटक की समाप्ति, लोकोन्मुखी भौतिकवादी-वैज्ञानिक विचारधारा, प्राचीनता एंव नवीनता का संघर्ष आदि इस वर्ग के नाटक की मौलिक विशेषताएं रही। कृपानाथ मिश्र, भुवनेश्वर, लक्ष्मीनारायण मिश्र, उपेंद्रनाथ अश्क, सेठ गोविंददास आदि इस वर्ग के प्रधान नाटककार रहे। पाश्चात्य समस्या नाटकों की प्रेरणा एवं प्रभावस्वरूप आधुनिक हिंदी नाट्यसाहित्य में अधिक मात्रा में समस्या नाटक लिखे जाते रहे।

डा. शंकर शेष आधुनिक हिंदी नाट्यसाहित्य के एक महत्वपूर्ण नाटककार रहे हैं। शेषजी ने भी समसामयिक परिवेश को अपने नाटकों द्वारा अभिव्यक्ति दी। स्वातंत्र्योत्तर काल की समसामयिक सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षणिक पारिवारिक समस्याएं उनके नाटकों में स्वाभाविकता से उभरी है। कला, शिक्षा, न्याय, प्रशासन, राजनीति आदि क्षेत्रों में चल

रही शोषणावृत्ति, लाचारी, समाज में परिवार में स्त्री-पुरुष सम्बन्धों में आयी अलगाव की स्थिति, स्वार्थांधता, दिन-प्रतिदिन आधुनिकता के नाम पर घट रहे। मानवीय मूल्य बढ़ती व्यापारी वृत्ति आदि समस्यामूलक स्थितियों का चित्रण डा. शेष के नाटकों में यथार्थता से हुआ है, फिर भी डा. शेष के अधिकांश नाटक समस्या नाटक के अंतर्गत समाविष्ठ नहीं होते। वे तो आधुनिक युगजीवन की अभिव्यक्ति है। अत: समसामयिक चेतना के अंग रूप में ही ये समस्याएं आ गयी हैं। 'पोस्टर' की समस्याएं भी स्वातंत्र्योत्तर काल के आदिवासी जीवन की यथार्थ अभिव्यक्ति हैं।

डा. शंकर शेष एक साहित्यकार एंव प्राध्यापक के साथ-साथ कुछ समय तक अनुसंधान अधिकारी भी थे। आदिम जाती अनुसंधान अधिकारी की हैसियत से उन्होंने 'बस्तर' तथा 'नारायणपुर' जैसे आदिवासी प्रांतों का भ्रमण किया था। इस दरमियान शोधकार्य करते हुए उन्होंने आदिवासियों का पिछडा जीवन करीब से देखा। उसमें तबाह होती मजदूर वर्ग की निरीह जिंदगियाँ देखीं। जमींदार वर्ग के शोषण में पिसती मनुष्यपीठियाँ देखीं। डा. शेष इस अन्यायकारी शोषण तंत्र से तिलमिला उठे। उनकी यही तिल-मिलाहट 'पोस्टर' में मूर्तिमान हो उठी है। 'पोस्टर' के द्वारा डा. शेष ने आदिवासियों की मूलभूत समस्याओं पर सूक्ष्मता से प्रकाश डाला है।

'पोस्टर' में आदिवासी प्रांत की विभिन्न समस्याएं अपने मूल स्वरूप में प्रस्तुत हुई है, जैसे - आर्थिक समस्या, शोषण समस्या, भ्रष्टाचार की समस्या, धार्मिक समस्या, शिक्षा समस्या आदि। किंतु इन सभी समस्याओं के आधार पर उक्त नाटक को समस्या नाटक की कोटी में नहीं रखा जा सकता, क्योंकि ये सभी समस्याएं नाटक में कृत्रिमता से चित्रित न होकर, स्वाभाविक रूप से आयी हैं। समस्या नाटक की भाँति किसी एक यथार्थ समस्या को लेकर यह नाटक नहीं चलता। जुलमी शोषण तंत्र की दासता में युग-युग से पीडित आदिवासी जनसत्ता की मूक व्यथा को यह नाटक प्रस्तुत

करता है। साथ ही 'पोस्टर' महाराष्ट्र की कीर्तनशैली में आबद्ध है, न कि अनुकरणात्मक यथार्थवादी शैली में। इसकी विषयवस्तु भी नितांत सामाजिक है और सामाजिकता के अंग रूप में ही इसमें विभिन्न समस्याओं का प्रस्फुटन हुआ है। अत: इसे यथार्थवादी सामाजिक नाटक कहना ही उचित होगा।

'पोस्टर' में आदिवासी प्रदेश की निम्नलिखित समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है।

3.1 आर्थिक समस्या :

मानव समाज अर्थ की क्षुद्र स्वार्थनीति पर टिका हुआ है। अर्थ का असमान एवं असंगत बँटवारा ही सामाजिक, आर्थिक विषमता को जनम देता है। यही कारण है, कि धनिक वर्ग अत्यधिक धनवान होता जा रहा है और गरीब दिन-प्रतिदिन दरिद्रता की खाई में गिरता जा रहा है। इसीकारण समाज में उँच-नीच, अमीर-गरीब, शोषक-शोषित जैसे विषम वर्ग निर्माण हो रहे हैं। अर्थ का विसंगत विभाजन ही समाज की विभिन्न समस्याओं की जड है। 'पोस्टर' में यह समस्या प्रधान रूप से आती है।

धन ही वह साधन है जिसके द्वारा मनुष्य समाज में अपना जीवन ठीक तरह से जी सकता है। आजकल धन मानव जीवन का प्राणतत्व बना है, क्योंकि इसके अभाव में मनुष्य का जीवन पशुवत् बन जाता है। धन समाज जीवन की प्रधान आवश्यकता है। किंतु धन का मोह मनुष्य उसके मानवीय धर्म से कर्तव्य-पथ से हटा देता है। परिणामस्वरूप लोकशाही राष्ट्र में भी शोषक वर्ग की एकाधिकार तानाशाही, शोषित वर्ग की दासता एवं शासन व्यवस्था की निष्क्रीयता दिन-ब-दिन बढती जा रही है। समाजमानस का डर इस स्थिति को और भी बढावा देता है। इससे बढकर लोकशाही राष्ट्र का और कौनसा दुर्भाग्य हो सकता है ?

नाटक में वर्णित आदिवासी जीवन कथा इसी आर्थिक

विषमता को प्रस्तुत करती है। एक ओर सुविधा संपन्न, भौतिक साधनों से भरपूर धनिक वर्ग का प्रतिनिधी छोटेलाल पटेल है, जिसने धन के बल पर पूरे जंगल का अप्रत्यक्ष ठेका ले रखा है। नेता वर्ग, पुलिस वर्ग वहाँ तक कि प्रशासकीय अधिकारी वर्ग भी उसके ईशारों पर नाचते हैं। पैसे के बल पर उसने अपनी एकाधिकार सत्ता को कायम रखा है, तो दूसरी ओर निम्न-स्तरीय जीवन व्यतीत करनेवाला मजदूर वर्ग है, जिसके पास न पहनने के लिए कपडा है, न खाने के लिए रोटी। दरिद्रता की भीषण आग में उनका जीना भी मुश्किल बनता जा रहा है। केवल प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दिन-रात कडी मेहनत करना उनकी नियति बन चुकी है।

आर्थिक तनाव के कारण मजदूर वर्ग का जीवन दिन-प्रतिदिन पशुजीवन से भी बद्तर बनता जा रहा है। वे सारे अनपढ मजदूर केवल एक रुपिया मजदूरी पर जंगल से हर्रा, बहेडा, आँवला, गोंद, चिरौंजी आदि इकठ्ठा करने का काम करते है। गोदाम में जाकर फिर उसकी छँटाई, सफाई का काम किया जाता है। पटेल यह तैयार माल शहर भेजकर, लाखों का मुनाफा अकेले ही हडप लेता है। इस संदर्भ में नाटक का निम्नलिखित कथन द्रष्टव्य है।

"सुखलाल : और भाव भी क्या बढिया है, मालिक ? बम्बई, कलकत्ता में चिरौंजी चल रही है अस्सी .... । गोंद का भाव भी बस मत पूछिये।"[3]

बेचारे आदिवासी मजदूर तो केवल एक रूपिया मजदूरी पाकर भी संतुष्ट थे, क्योंकि वे सभ्यता की रोशनी से दूर जंगल में बसे थे। अपनी आर्थिक समस्या को सुलझाने की, आर्थिक अधिकार सुरक्षित रखने की चेतना उनमें जागृत ही नहीं हुअी थी। इसके लिए कारणभूत है, मजदूरों का अज्ञान, अशिक्षा एवं शोषक वर्ग की तानाशाही से सना जंगली परिवेश। जहाँ पुलिस व्यवस्था, प्रशासन व्यवस्था ही पटेल की दासता में पनपती हो,

वहाँ सामान्य अनपढ मजदूर अपनी स्वतंत्र सत्ता को भला कैसे जीवित रख सकती है ?

मजदूरों में आर्थिक स्वतंत्रता की भावना तो बहुत देरी से निर्माण होती है। चैती द्वारा शहर से लाया गया 'पोस्टर', जो मजदूर युनियन का प्रतीक है, मजदूरों में जागृति निर्माण करता है। यही 'पोस्टर' मजदूरों की संघशक्ति का, पटेल जैसे शोषक वर्ग के खिलाफ मूक क्रांति का प्रभावी माध्यम बन जाता है ; जिससे पटेल जैसा सर्वेसर्वा भी डरता है। घबराकर पटेल मजदूरों की मजदूरी एक रुपिये से डेढ रुपिये तक बढा देता है। यह संघ-शक्ति की विजय है।

किंतु वास्तव में यह समस्या का समाधान नहीं है। इस समस्या को निपटाने के लिए मजदूरों का शिक्षित, समझदार बनना आवश्यक है। तभी वे अपने अधिकारों के प्रति, समस्याओं के प्रति सचेत बनकर ठोस कदम उठा सकते हैं। तभी जाकर यह मजदूर दरिद्रता की खाई से मुक्त होकर स्वयंपूर्ण एवं स्वाभिमानी जीवन बिता सकता है।

३.२ शिक्षा समस्या :

प्रारंभ से ही डा. शेष की शिक्षा क्षेत्र में रुचि रही। हमेशा वे पठन-पाठन से संलग्न रहे। एक प्राध्यापक के साथ-साथ अनुसंधान अधिकारी की हैसियत से भी कार्यरत रहे। आदिम जाति अनुसंधान अधिकारी के रूप में वे आदिवासी प्रांत में घूमे। वहाँ का पिछडा जनजीवन उन्होंने देखा, परखा। शिक्षा के अभाव में आदिवासियों की जीवन-त्रासदी देखकर वे तिलमिला उठे। उनकी यही वेदना 'पोस्टर' में प्रतिबिम्बित हुई है।

मनुष्य जब तक पढता नहीं, तब तक वह अनाड़ी, अज्ञानी रहता है, क्योंकि पठन पाठन से मनुष्य का जीवन प्रगतिशील बन जाता है । यदि व्यक्ति अशिक्षित हो, अज्ञानी हो, तो वह अपने सामाजिक व्यवहारों के प्रति, अपने अधिकारों के प्रति बेखबर रहता है। अज्ञान का, रूढियों का

साया उस पर पड़ा रहता है। ऐसी हालत में मनुष्य अपनी विचारशक्ति, स्वतंत्र निर्णयक्षमता भी खो बैठता है। यही कारण है कि 'पोस्टर' में आदिवासी मजदूर इसी अशिक्षा की वजह से पटेल के अत्याचार के शिकार बन जाते हैं।

ये आदिवासी मजदूर ऐसे दुर्गम प्रांत में बसे हुए हैं, जहाँ शिक्षा की, सभ्यता की रोशनी तक नहीं पहुँची। लोगों के हर व्यवहार में पिछड़ापन है। अपनी अनपढ़ स्थिति की वजह से वे पटेल की शोषण वृत्ति को पहचान नहीं पाते। उसकी असलियत वे समझ नहीं पाते। उनमें अज्ञान इतना अधिक है कि वे पटेल जैसे आधुनिक शोषक को भगवान का रूप मानते हैं। जो पटेल कहता है, वैसा ही वे करते हैं। पटेल की खुशी में अपनी खुशी मानते हैं। नाटक के निर्दिष्ट कथोपकथन इस स्थिति की पुष्टि करते हैं।

" पटेल : बताओ तुम लोग खुश हो या नहीं ?

सब : हां, मालिक .....

पटेल : सबको रोटी मिलती है ना ?

सब : हां, मालिक।

पटेल : कोई शिकायत तो नहीं ?

सब : ना, मालिक।

सुखलाल : तो कहो - हम सब सुखी है।

सब : हम सब सुखी है।

सुखलाल : हम सब खुश है।

सब : हम सब खुश है।

सुखलाल : हमको कोई शिकायत नहीं।

सब : हमको कोई शिकायत नहीं।"[५]

नाटक के उपर्युक्त कथोपकथन स्पष्ट करते हैं कि अज्ञान के कारण व्यक्ति अपनी निर्णय क्षमता भी कैसे गवाँ देता है, और शोषक वर्ग की दासता उनकी करुण नियति बन जाती है, क्योंकि वर्तमान मानव के सभी व्यवहारों से, आधुनिकता से बेखबर आदिम जंगली इलाके में वे रहते हैं।

जहाँ पटेल ही सर्वेसर्वा है। पटेल के हुक्म बिना उनके जीवन की गति भी रुक जाती है।

वस्तुत: व्यक्ति की अनपढ़ अवस्था विविध समस्याओं को अपनी ओर खींच लेती है। मजदूरों की समस्याओं की जड़ में उनका अज्ञान ही अधिक मात्रा में कारणभूत रहा है। यदि वे शिक्षित होते, समझदार होते, तो कभी भी एक रूपिया मजदूरी में काम नहीं करते। बल्कि पटेल के शोषण का डटकर मुकाबला करते। स्वतंत्र व्यवहारदृष्टि एवं स्वतंत्र जीवनदृष्टि का वे निर्वाह करते। चैती की समस्या वे सम्पूर्ण समाज की समस्या मानते।

चैतीद्वारा शहर से लाया गया पोस्टर मजदूरों में स्वत्व भावना जगाता है, किंतु उस पोस्टर के अर्थबोध से, वे अपनी अनपढ़ स्थिति के कारण अपरिचित रह जाते हैं। काले अक्षर भैंस बराबर जैसे उनकी स्थिति है।
उनकी यही स्थिति उनके दास्यत्व का, पिछड़ेपन का प्रधान कारण बन जाती है। गुरुजीद्वारा पोस्टर का ज्ञान एवं उसका अर्थबोध होने के बाद वे अन्याय का सामुहिक रूप से विरोध करते हैं।

पटेल जैसे शोषकवर्ग अपनी एकाधिकार सत्ता कायम रखने के लिए मजदूर वर्ग का अज्ञान बनाये रखने की कोशीश करते हैं। उसके लिए वे विभिन्न हथकंडे भी अपनाते रहते हैं, ताकि उनकी स्वतंत्र सत्ता बनी रहे। पटेल भी इसी शोषकवर्ग का प्रतिनिधी पात्र है। वह भी तथाकथित साधु स्वामी अखंडानंद को बुलवाकर स्वर्ग-नरक की तस्वीरों द्वारा मजदूरों में अंधश्रध्दाएं फैलाता रहता है। अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए मजदूरों का अज्ञान कायम रखने की कोशिश करता है, और बेचारे मजदूर पाप-पुण्य की कल्पना से पटेल की शोषणनीति का शिकार बनते रहते हैं। नाटक का निम्नांकित कथोपकथन यहाँ विचारनीय है।

"समूह (क) :

२. अरे इसको तो भजिये की तरह तल रहे हैं रे राक्षस लोग!

३. जरूर साले ने मालिक के साथ गद्दारी की होगी ....

"समूह (ख) :

१. भैया, मान गये .... क्या लड्डू-पेड़ा खा रहा है! वाह!

२. मुंह में पानी आ गया क्या ?

३. मालिक की सेवा का फल पा रहा है साला....

समूह (ग) :

१. हमको सरग मिलेगा क्या रे .....

२. और नहीं तो .....

३. हमको सरग ही मिलेगा भैया ....."[५]

मजदुरो की इस स्थिति, शोषित अवस्था का एक मात्र कारण है, उनका अज्ञान, अशिक्षा। पटेल इसी का फायदा उठाता है। उसमें कोई परिवर्तन न हो उसकी एकाधिकार सत्ता टस से मस न हो, इसीलिए वह प्रयत्नशील है।

आदिवासी जनजीवन का यह पिछड़ापन एवं दासता तभी दूर हो सकती है, जब वे शिक्षित बन जाएँगे, क्योंकि शिक्षा मनुष्य की विवेकशक्ति को जागृत करती है। उसे स्वतंत्र जीवनदृष्टि देती है। अच्छे-बुरे की परख एवं समझदारी जगाती है। अत: ऐसी स्थिति में कोई भी पटेल किसी मजदूर के अज्ञान का फायदा उठाकर उनका शोषण नहीं करेगा। वर्गीय सत्ता सुरक्षित रखने के लिए किसी अखंडानंद को बुलाकर अंधश्रध्दा बनाये रखने का प्रयोग नहीं करेगा और ऐसे प्रयोगों से शिक्षित मजदूर कभी खुद को नहीं फँसायेगा। वास्तव में शिक्षा मनुष्य की जागृति का प्रभावी साधन है। वही उसकी अधिकांश समस्याओं का उपाय भी है, जिसकी आवश्यकता डा.शेष ने 'पोस्टर' में सूचित की है।

३.३ शोषण समस्या :

'पोस्टर' नाटयकृति में शिक्षा समस्या के साथ ही शोषण समस्या भी प्रधान रूप से आ चुकी है। यह समस्या वास्तवता के धरातल पर गहराई से प्रस्तुत हुई है। वैसे शोषण परम्परा आदिम युग से भारत देश में वर्तमान रही है। बडी ताकद हमेशा ही निम्न वर्ग का शोषण

करती आयी है। प्रस्तुत नाटक में डा. शेष ने इस शोषण परम्परा को यथार्थता से प्रस्तुत किया है। शोषण की भयंकारिता, उसे अबाधित बनाये रखनेवाली भ्रष्ट एवं लाचार शासनसत्ता, स्वार्थलोलुप, बेफिक्र पुलिस एवं न्याययंत्रणा एवं इन सारी में बेकसूर पिसती जा रही निरीह आदिवासी जनता का हृदय वास्तवस्पर्शी दाहक चित्र डा. शेष ने प्रस्तुत किया है।

डा. शेष आदिम जाति अनुसंधान आधिकारी की हैसियत से आदिवासी प्रदेश में कार्य कर चुके थे। उस समय उन्होंने बस्तर, नारायणपुर जैसे आदिवासी इलाके में रहनेवाली आदिवासी जिंदगियाँ देखी, परखी थीं। अत: आदिवासियों का पिछड़ापन, उनपर होनेवाले वरिष्ठ वर्ग के अन्याय-अत्याचार, दिन-प्रतिदिन उनका हो रहा शोषण प्रस्तुत कृति में सूक्ष्मता से प्रतिबिम्बित हुआ है।

शोषण समस्या समस्त मानवीजाति का शापित वास्तव रही है। प्राचीन समय से ही इस कटु वास्तव ने समाज की विभिन्न समस्याओं को जन्म दिया है। समाज की निरीह जिंदगियाँ तबाह कर डाली है ; आर्थिक विषमता की दरारें पैदा की है। संकीर्ण सामाजिक मान्यताओं को जन्म दिया है। यही कारण है कि समाज का एक वर्ग दूसरे वर्ग के प्रति समान भाव नहीं रखता। उच्च धनिक वर्ग हमेशा ही निम्न वर्ग के प्रति हीन भावना रखता है, तो सत्ता-संपत्ति के अभाव में निम्न वर्ग, जमींदार वर्ग के प्रति भय की दृष्टि से देखता है, जिससे वह अन्याय, अत्याचार को सहता रहता है। उसका खुलकर विरोध करने की उसकी हिम्मत नहीं होती। प्रस्तुत नाटक में डा. शेष ने शोषण के इसी भयावह स्वरूप को यथार्थ दृष्टि से प्रस्तुत किया है।

शहर से दूर घने जंगली इलाके में बसे हुए ये आदिवासी पटेल की तानाशाही में जी रहे हैं। न उन्हें खाने के लिए रोटी मिलती है, न पहनने के लिए तन पर कपड़ा। फिर भी वे जी रहे है। केवल एक रूपिया

मजदूरी में, पटेल की खेती में, कडी मेहनत करना, दिन-प्रतिदिन मुश्किल होता जा रहा है। फिर भी वे इसी में संतुष्ट हैं क्योंकि उन्हें संतुष्ट होना पड़ता है। वर्तमान हालात भी इससे भिन्न नहीं है। डा. प्रकाश जाधव इस संदर्भ में कहतें हैं, "..... आज भी उनका शोषण होता है। वे उनके अन्याय अत्याचार को चुपचाप सहन करते हैं। उनका देवत्व उनकी निरीह सहनशीलता है। वे अनपढ़ होने के कारण विरोध नहीं कर सकते। दिन-रात मेहनत कर, मालिक जो देता है उसी को स्वीकार कर ; वे दिन गुजार लेते हैं। वे नहीं जानते कि उनके ही रक्त पर बडों का घर भर रहा है।"[6] अर्थात आज भी आदिवासी प्रांतो में यह शोषण समस्या जहाँ गंभीर रूप धारण कर रही है, वहाँ समाज सुधार की अत्यंत आवश्यकता है।

यह शोषणतंत्र आर्थिक ही नहीं, बल्कि श्रम, अधिकार स्वायत्तता आदि कई स्तरों पर प्रबल बन गया है। नाटक के आरंभ में ही इसके कई दृश्य दिखाई देते है। कीर्तनकार के ब्रह्मनिरूपण में रुकावट निर्माण करनेवाला युवा इसे स्पष्ट करता है कि बड़ी ताकद किसप्रकार निम्न वर्ग का जीना हराम कर रही है। पैसे के बल पर एवं ताकद के बल पर गरीब लाड़कियों पर भीषण बलात्कार किए जाते हैं और उसे जानकर भी कोई कुछ नहीं कर सकता। अत्याचार के खिलाफ आवाज तक नहीं उठा सकता, क्योंकि अगर ऐसा हुआ, तो बड़ी ताकद उन्हें जीने नहीं देगी। युवा के ही शब्दों में, " ..... महाराज, मुझे अपना डर नहीं है। बोलुंगा तो कोई विश्वास नहीं करेगा। लोग मुझे मारेंगे। कोई बात नहीं ..... मुझे मारें ..... लेकिन ये लोग मेरे जाति के लोगों का जीना हराम कर देंगे।"[7] क्या यह सामान्य वर्ग की स्वायतता का शोषण नहीं है ? न वे अपनी मर्जी से इज्जत के साथ जी सकते हैं, और न ही अपने पर हुए अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठा सकते हैं। क्योंकि वे जानते है कि कहीं भी कुछ भी नहीं होगा। पैसा एवं ताकद के बल पर सब कुछ रफादफा हो जाएगा। जहाँ चारों ओर लोकशाही के नाम पर नादिरशाही मची हो, पुलिसयंत्रणा, न्यायव्यवस्था यहाँ तक की

खुद शोषित लड़की का बाप भी क्रीतदास हो गया हो, वहाँ न्याय की गुंजाईश भी सर्वथा व्यर्थ है।

उच्च धनिक वर्ग की यह शोषणनीति मजदूरों के तन को, मन को, अधिकारों को, स्वतंत्र जीवन पध्दति को, सब को लील रही है। अपनी इस शोषण परम्परा को कायम रखने के लिए पटेल भोंदु स्वामी अखंडानंद को बुलवाकर लोगों का अज्ञान बनाये रखने की कोशिश करता है। स्वामी भक्ति का फल, विद्रोही वृत्ति का फल, गद्दारी का फल वह स्वर्ग-नरक की तस्वीरों द्वारा लोगों के मन पर जताता रहता है। ताकि ये अनपढ़ लोग अन्याय को, अधर्म को ही ठीक समझते रहे। विद्रोह की भाषा हि न सीखें। जो चल रहा है, उसी में ही वे संतोष मानते रहें। पुण्य की अभिलाषा एवं पाप के भय से उनका विद्रोही स्वर, चिंतनप्रवाह नष्ट हों। उन्हें सोचने का अवकाश तक न मिले। बेचारे मजदूर भी स्वर्ग प्राप्ती की कल्पना से एवं नरकयातना के भय से अपना काम अधिक तेजी से एवं निष्ठा से करते हैं।

पटेल अपनी एकाधिकार सत्ता को रिश्वतबाजी से, शोषण की कूट नीति से बनाए रखता है। रिश्वत देकर, महँगी विलायती शराब पिलाकर तथा समय-समय पर भोग लगाने के लिए आदिवासी औरतें डाकबंगालों में पहुँचाकर, वह अधिकारी वर्ग, पुलिसयंत्रणा, न्यायव्यवस्था को भी खरीद लेता है। अत: उसकी एकाधिकार, सत्ता टस से मस नहीं होती। इसप्रकार पटेल कभी धर्म की ओट में, कभी धन का लालच दिखाकर, तो कभी अपनी तानाशाही के बल पर मजदुरों का शोषणही शोषण कर रहा है।

किंतु संघशक्ति के आगे बड़ी से बड़ी शोषण सत्ता झुकती है, यह एक ऐतिहासिक सत्य रहा है। सर्वप्रथम चैती इस शोषण के खिलाफ विरोध का पहला कदम उठाती है। अनजाने में शहर से लाया गया मजदूर युनियन का प्रतीक 'पोस्टर' उन्हें विद्रोह का रास्ता दिखाता है। जिसे देखकर पटेल जैसा सर्वेसर्वा भी डरता है। अपनी एकाधिकार सत्ता को बनाये रखने की चिंता उसे त्रस्त बनाती है, किंतु हमारे भारत देश की यह शापित

नियति रही है कि संघशक्ति सामूहिक हित के लिए तो संघर्ष करती है, किंतु किसी की वैयक्तिक समस्या सुलझाने के लिए कोई तैयार नहीं होता। भौतिक सुखसाधनों का प्रलोभन बड़ी से बड़ी संघशक्ति को भी खोखला बना देता है। मजदुरी बढ़ने की बात पर तो सभी मजदूर एकसंघ है, किंतु जब चैती की शील - रक्षा का प्रश्न उपस्थित हो जाता है, तो सभी मजदूर उसे चैती और कल्लु की व्यक्तिगत समस्या मानकर पीछे हट जाते हैं। समय आने पर सभी बाद में एकसंघ होकर सशक्त विरोध भी करते हैं, किंतु आपस की फूट के कारण लक्ष्य तक पहुँचने में असफल रह जाते है। डा. नरनारायण राय इस संदर्भ में लिखते हैं, "..... हमारे देश का शोषण तंत्र इतना प्रबल है कि संघठित से संघठित विरोध भी आपस की फूट के कारण विफल बन जाता है, और शोषणचक्र हमारी नियति बनकर रह जाता है। शोषण के विरोध में एकत्र होनेवाली शक्ति को सुविधा का प्रलोभन धीरे-धीरे निगल जाता है।"[८] " ..... दिलकत यह है, हर वह आदमी जो अपने खास आदमी बन जाने की लड़ाई जीत लेता है फिर आम आदमी का ही मांस नोचने लगता है। कभी समाज के नाम पर .... तो कभी देश के नाम पर और कभी बाहरी ताकदों के घरेलु मामलों में दखलन्दाजी करने पर। यह रक्तबीज केवल शोषण का ही नहीं है, अपितु शोषितों के खुन में घुला-मिला है।"[९] ऐसी स्थिति में शोषण तो एक न मिटनेवाली समस्या बनकर रह जाती है, क्योंकि शिक्षा एवं कानून व्यवस्था व्यक्ति में बाह्य परिवर्तन ला सकती है, किंतु खून में मिली हुअी अंदरूनी प्रवृत्तियों को वे उखाड़ नहीं सकती।

किसी भी बात की पहल एक व्यक्ति को करनी पडती है, संघर्ष की शुरुआत पहले कोई एक व्यक्ति करता है, उसकी ताकद और प्रेरणा से बाकी सब उसका साथ बाद में देते है। हमारे देश में तो ऐसा कोई मुखिया या नेता हो, तो ही बाकी लोग विरोध के लिए तैयार होते हैं। समुह एकाएक विरोध करने के लिए तैयार नहीं होता। जब चैती ने डटकर विरोध दिखाया, तभी सब उसका साथ देने के लिए तैयार हुए। यह हमारी कमजोरी है,

सामूहिक रूप से यकायक विरोध करने के लिए तैयार नहीं होते। हमें किसी नेता की आवश्यकता होती है। यह तो हमारी परम्परा है।

३.४ धार्मिक समस्या :

आदिम युग से ही धर्म समाज का केंद्रीय भाव रहा है। समाज जीवन इस धर्मभावना से अभिन्न रूप से जुडा रहता है। धर्म के प्रभाव में समाज जीवन प्रवाहित होता रहता है। समाजमानस पर धर्म का गहरा प्रभाव रहता है, किंतु कई बार ऐसा होता है कि कुछ समाजकंटक लोग लोगों की धर्मभावना का नाजायज फायदा उठाते हैं। लोगों की धर्मभावना को वे अपनी स्वार्थपूर्ति का साधन बना लेते हैं। धर्म के नाम पर अनाचार को, व्यापारी वृत्ति को बढावा देते हैं। समाज का एक वर्ग, दूसरे वर्ग को इसी धर्म की ओढ में फँसाने की, उन्हें लाटने की कोशीश करता है। लोगों की धर्मभावना का खिलवाड़ किया जाता है। उसे लोगों का अज्ञान बनाये रखने के लिए एवं समाजमानस में अंधश्रध्दा फैलाने के लिए माध्यम रूप में अपनाया जाता है। ऐसी स्थिति में धर्म के नाम पर अधर्म का बढ़ता प्रयोग समाज को पतन की ओर ले जाता है, और यही स्थिति समस्या का स्वरूप धारण करती है।

शोषण के लिए धर्म का प्रयोग पुरातन काल से चला आया है। मार्क्स कहता है कि धर्म एक अफीम है, जिसके केवल नाम से ही मनुष्य चाहे जो अन्याय अत्याचार करने को तैयार होता है। हमारे मध्ययुग का इतिहास इसी धर्म से लांछीत शोषण का ही इतिहास है।

डा. शेष ने 'पोस्टर' में अन्य समस्याओं की भाँति आदिवासी प्रदेश की धार्मिक समस्या पर भी प्रकाश डाला है। कीर्तनकार के द्वारा एक ओर शेषजी सच्चे मानवतावादी धर्म का निरूपण करते हैं, तो दूसरी ओर धर्म का वास्तव स्वरूप ज्ञात न होने से आदिवासी मजदुरों की हो रही दयनीय शोषित अवस्था का यथार्थ चित्र हमारे सामने प्रस्तुत करते है।

मानवतावादी धर्म समाज की ऐसी शक्ति है, जो सच्चाई

का, इन्सानियत का रास्ता दिखाती है। जीवन के हर मोड़ पर हर क्षेत्र में उसका मार्गदर्शन करती है। जब व्यक्ति धर्म के रास्ते पर चलने लगे तो सही अर्थ में उसका जीवन सुखी होता है, किंतु अज्ञान के कारण व्यक्ति धर्म के सच्चे स्वरूप को समझ नहीं पाता और अधर्म का, अविवेक का साथ देता रहता है। 'पोस्टर' में पटेल आदिवासी मजदूरों की इसी अज्ञान एवं अनपढ़ अवस्था से फायदा उठाता है। धर्म के नाम पर अंधश्रध्दा का प्रसार करता है। रिश्वत के बल पर तथाकथित स्वामी अखंडानंद को बुलवाकर लोगों को अधर्म, अंधश्रध्दा की नसीहत देता है, ताकि कोई भी व्यक्ति उसकी तानाशाही की ओर उँगली भी न उठा सके। उसके हर कृत्य को, हर विचार को उचित माने। किसी में भी उसका विरोध करने की हिम्मत ना हो। शोषक वर्ग की यह धूर्त धर्मनीति समाज का खून चूसती है, मानवता पर कीचड़ उछालती है, समाज को गुलामी की खाई में धकेल देती है।

नाटक में पटेल मजदूरों की धर्मभावना को अपनी स्वार्थपूर्ति एवं मजदूरों का अज्ञान बनाये रखने के माध्यम के रूप में प्रयुक्त करता है। आदिवासी मजदूर अज्ञानी है, अनपढ़ है तथा आदिम अवस्था में जी रहे हैं, अत: उनके मन मस्तिष्क पर धार्मिक बातों का असर तुरंत हो जाता है, क्योंकि अनपढ, अनाडी व्यक्ति धर्म के प्रभाव में रहता है। पाप-पुण्य की कल्पना असके मन पर अत्याधिक हावी रहती है। वह पाप के परिणाम से डरता है। अत: पुण्यप्राप्ति के लिए धर्म का आचरण असकी मजबूरी एवं कस्म नियति बन जाती है। पटेल जैसे शोषक निम्नवर्ग की इसी मजबूरी का फायदा उठाते हैं। पटेल तथाकथित नकली साधु अखंडानंद को बुलवाकर लोगों का अज्ञान बनाये रखने की कोशीश करता है, ताकि भविष्य में उसकी मनमानी का कोई विरोध न कर सके। अखंडानंद के द्वारा वह मजदूरों को सुनवाता है कि मालिक की सेवा में ही सेवक के जीवन की सफलता है, क्योंकि जो निष्ठा से मालिक की सेवा करेगा, उसे स्वर्ग प्राप्ति होगी। वह स्वर्गीय सुख का अधिकारी बनेगा, और जो मालिक से धोखा करेगा,

काम से जी चुरायेगा वह नरक यातना का भागी बनेगा। इस अज्ञान एवं अंधश्रध्दा को बनाये रखने के लिए वह स्वर्ग-नरक की तस्वीरों को अपने कारखाने में चिपकाना चाहता है। इस संदर्भ में वह स्वामी अखंडानंद से कहता भी है, "--- अगर आप अनुमती दें तो हम इन तसवीरों को यहां चिपका दें, महाराज! इनसे हम सब लोगों को प्रेरणा मिलती रहेगी --" [१०]

इसप्रकार ये अज्ञानी मजदूर पटेल के दर्शाये हुए रास्ते पर चलते हैं और धर्म के नाम पर अधर्म का साथ देते हैं। आज वर्तमान समय में शोषक वर्ग की तानाशाही में धर्म का हो रहा अवमूल्यन, दिन-प्रतिदिन घटती धर्मभावना, समाज को अधर्म की ओर ले जा रही है। जिसके परिणामस्वरूप आज विकृति एवं विघटन की ओर जा रहा है। पटेल का स्वार्थपूर्ति हेतु मजदुरों से किया गया व्यवहार अधर्म का वास्तव चित्र प्रस्तुत करता है। डा. शेषजी ने अधर्म को निपटाने के लिए मजदूर संघर्ष के व्दारा मानवतावादी धर्म की आवश्यकता प्रतिपादित की है, क्योंकि सच्चा मानवतावादी धर्म कभी भी अन्याय सहने के संस्कार नहीं देता, बल्कि वह तो अन्याय से जूझने की, उसे मिटाने की सबल प्रेरणा देता है। नाटक के आरम्भ में कीर्तनकार अर्जुन और श्रीकृष्ण के संभाषण व्दारा यह बात स्पष्ट कर देता है, " ----हे प्रभो! भले ही अन्यायी और अत्याचारी हों ------ लेकिन मैं अपने ही लोगों को कैसे मारूं ? ---- हे अर्जुन, नपुंसकता को छोड़। तुच्छ हृदय की दुर्बलता को त्यागकर युध्द के लिए खड़ा हो जा। ---- और यदि तू इस धर्मयुक्त संग्राम को नहीं करेगा तो स्वधर्म को खोकर पाप को प्राप्त होगा। अपने इन अधर्मी रिश्तेदारों के शरीरों का मोह ------ इस नाशवान शरीर का मोह -----अर्जुन, सत्य तो आत्मा ही है। उसी की पुकार सुन।" [११]

कीर्तनकार का यह निरूपण मानवतावादी धर्म की प्रेरणा देता है। नाटकीय कथावस्तु के अंत में समस्त मजदूरों का स्वहित रक्षाणार्थ पटेल से किया मूक विरोध, चाहे वह संघर्ष ही क्यों न हो, किंतु उसकी प्रेरणा

यही मानवतावादी धर्म रहा है, क्योंकि सच्चा मानवतावादी धर्म सत्य एवं न्याय की रक्षा के लिए भयमुक्त कर क्रांति की प्रेरणा देता है। धर्म की रक्षा एवं अधर्म से मुक्ति पाने के लिए मानवतावादी धर्म का पालन आवश्यक है। इसी धार्मिक समस्या को प्रस्तुत करते हुए डा. शेषजी ने धर्म के विभिन्न स्वरूपों पर भी प्रकाश डाला है और चिंतन की नई दिशाएँ प्रस्तुत की है। धर्म और समाज के पारस्परिक सम्बन्ध एवं आवश्यकता क्या है ? सच्चा धर्म किसे कहा जा सकता है ? वर्तमान समय में धर्म की विडम्बना कैसे और क्यों हो रही है ? उस विडम्बना को दूर करने के उपाय क्या है ? आदि सवालों के जवाब ढूँढने की कोशिश भी नाटककार ने की है और पाठक को इस दृष्टि से सचेत किया है।

३.५ अधिकार की समस्या :

अधिकार की समस्या नितांत वैयक्तिक होकर भी वह अविभाज्य रूप से समाज से जुडी हुअी है, क्योंकि व्यक्ति और समाज अभिन्न है। अत: व्यक्ति की समस्या पूरे समाज की समस्या बन जाती है और हर सामाजिक समस्या का सम्बन्ध व्यक्ति से रहा करता है। व्यक्ति के अधिकार जब तक स्वाय-त है, तब तक वे सुरक्षित है, जब उन अधिकारों पर कोई सत्ता दबाव डालने लगती है, उनके अधिकारों का उपयोग समाजहित के लिए न कर निजी स्वार्थपूर्ति एवं सत्ता सुविधा बनाये रखने के लिए किया जाता है, तब अधिकारों की स्वायत्तता नष्ट हो जाती है। अत: व्यक्ति का, परिणामस्वरूप सम्पूर्ण समाज का जीवन ही पराधीन बन जाता है। लोकशाही जनतंत्र में इसप्रकार चलनेवाली तानाशाही डा.शेष ने यहाँ मार्मिकता से प्रस्तुत की है।

भारत देश एक जनतंत्रवादी राष्ट्र है, जिसमें हर व्यक्ति को स्वतंत्र रूप से अपनी जिंदगी बसर करने का अधिकार है। व्यक्ति को स्वेच्छा से एवं अपनी दृष्टि के अनुसार जीवन मापन करने का अधिकार है, किंतु आज स-ताव्यवस्था के हाथों इन अधिकारों की सुरक्षा के बजाय उन्हें

कुचल दिया जाता है, उनका शोषण किया जाता है। सत्ता, सुविधा के बल पर सामान्य वर्ग के अधिकारों को छीन लिया जाता है। अत: ऐसी स्थिति कई सामाजिक समस्याओं को जन्म देती है।

व्यक्तिगत हित से सामाजिक हित अधिक महत्त्वपूर्ण एवं उँचा होता है, क्योंकि उसमें समस्त सामाजिक के कल्याण की भावना निहित रहती है। अत: स्वस्वार्थ हेतु सामाजिक अधिकारों को कुचलकर समाज जीवन को दाँव पे लगाना उचित नहीं है। समाज के अधिकार धन के बल पर एवं सत्ता के बल पर किसी भी व्यक्ति को उसे हथियाना नहीं चाहिए। व्यक्ति सत्ता का प्रयोग उपने स्वार्थ के लिए करता है। आज सत्ता उपभोग का साधन बन चुकी है। असल में सत्ता समाजसेवा का साधन है। पर आज के सत्ताधिश इसका प्रयोग अपने स्वार्थ के लिए करते हैं। पैसे से वह चाहे जो कर सकता है, पैसे से सत्ता वा संपत्ति प्राप्त कर सकता है। आज मानवी जीवन का केंद्र अर्थ बन चुका है। डा.शेष 'पोस्टर' में मालिक-मजदूर संघर्ष के व्दारा इसी शाश्वत सत्य पर प्रकाश डालते हैं। अपने स्वायत्त अधिकारों को सुरक्षित रखने के लिए भ्रष्ट अन्यायी सत्ता का विरोध करना अनिवार्य बन जाता है। नाटक के अंतिम अंश में चित्रित संघर्ष इसी तथ्य पर प्रकाश डालता है। चैती व्दारा अनजाने में लाया गया "पोस्टर" मजदूरों में अधिकारों की माँग एवं सुरक्षा के प्रति चेतना जगाता है। इसी चेतना के बल पर वे पटेल जैसे शोषक वर्ग के खिलाफ मूक क्रांति करते हैं, जिससे उनकी मजदूरी एक रूपिये से डेढ़ रूपिये तक बढ़ जाती है। इस वक्त सभी एक होकर अधिकार प्राप्ति के लिए एकसंध तो हो जाते हैं, किंतु जब चैती की रक्षा का सवाल पैदा होता है, तो कोई भी मजदूर कल्लु और चैती का साथ देने के लिए तैयार नहीं होता। इस वक्त सभी मजदूर (केवल मजदूर-3 के सिवाय अन्य) कल्लु और चैती की व्यक्तिगत समस्या मानकर पीछे हट जाते हैं। यहाँ नाटककार ने एक सवाल निर्माण किया है कि क्या व्यक्ति की प्रतिष्ठा समाज की प्रतिष्ठा नहीं है ? क्या व्यक्ति की समस्या समाज से अलग है ?

जो संकट आज चैती पर आ गया है, कल वह अन्य किसी भी आदिवासी महिला पर आ सकता है। इस संदर्भ में मजदूर-३ कल्लु से कहता भी है, "---- आज तेरी झंझट में नहीं पड़ूंगा तो वह कल मेरी झंझट बन जायेगी।"[१२]

यहाँ डा. शेष वर्तमान स्थिति पर प्रकाश डालते हैं, किंतु हमारे आदिवासी जो अनपढ़ हैं, अनाड़ी हैं, अज्ञान के कारण वे अपना भला-बुरा समझ नहीं पाते, अपने खोये हुए अधिकारों के प्रति वे सजग नहीं है। पटेल जो देता है, उसी में रुखा-सुखा खाकर वे संतोष मानते हैं। उनका यह अज्ञान 'पोस्टर' से दूर हो जाता है। पोस्टर को देखकर पटेल क्रुध्द मनस्थिति से मजदूरी बढ़ा देता है, तथा मजदूरों में भी उनके अधिकारों के प्रति चेतना जागृत होती है। साथ ही यह तथ्य यहाँ प्रकट हुआ है कि अधिकार कभी माँगने से नहीं मिलते, उन्हें संघर्ष से हासील करना पड़ता है। जब मजदूर एकसंघ होकर पटेल का कड़ा विरोध करते हैं, अंत में उसे मारने की कोशिश करते हैं, उस समय पटेल मजदूर एकता के आगे हार जाता है। जो पटेल जंगल का सर्वेसर्वा है, शोषक वर्ग का प्रतिनिधि है, मजदूरों के सामने गिडगिडाता है, अब अपने प्राणों की भीख माँगता है। बदले में वह, मजदूरों को जो चाहे वह देने के लिए तैयार है। यहाँ तक की चार रुपिये तक मजदूरी देने के लिए वह तैयार होता है। अर्थात जब व्यक्ति अपने अधिकारों की सुरक्षा के लिए जूटकर लड़ता है, तब वह हर हालत में अपनी स्थिति से उपर उठ सकता है, बड़ी से बड़ी सत्ता को भी डावाँडोल कर सकता है।

मजदूरों में अपने अधिकारों के प्रति अज्ञान एवं उदासीनता का प्रधान कारण है, उनकी अनपढ़ अवस्था। पटेल मजदूरों की इसी कमजोरी का फायदा उठाता है। वह तथाकथित नकली साधु अखंडानंद के व्दारा मजदूरों में धार्मिक अंधविश्वास फैलाता है। पाप का भय एवं पुण्य की कल्पना मजदूरों में असामंजस्य की स्थिति निर्माण करती है। ऐसी स्थिति में मजदूर अपने अधिकारों के प्रति, न कुछ सोच सकते हैं, न समझ सकते हैं।

धर्म, नीति, पाप-पुण्य की कल्पना आदि को लेकर उनमें असामंजस्य की स्थिति निर्माण होती है।

चैती द्वारा शहर से लाया गया 'पोस्टर' मजदूरों में अधिकार चेतना जागृत करता है। अधिकारों की सुरक्षा एवं प्राप्ति के लिए उन्हें मूक संघर्ष की प्रेरणा भी देता है, जिसमें कुछ सीमा तक वे सफल भी हो जाते हैं। इस संदर्भ में डा. गौतमजी कहते हैं, " ----- यह खामोशी की भाषा, खामोशी की परीक्षा, वास्तव में अस्मिता की तलाश की कोशिश थी। अधिकारों को प्राप्त करने के लिए उन्हें सत्याग्रह की भाषा आ गयी थी। प्रथम कोशिश में उन्हें दो सफलताएं मिलीं - एक मजदूरी बढी और दूसरी उनकी आत्मा जागृत हो उठी।"[१२] अर्थात पोस्टर उनकी अधिकार चेतना को जगाने में अधिकांशत: सफल रहता है।

'पोस्टर' में मजदूरों के अधिकारों की समस्या सूक्ष्मता से तथा जडसहित प्रस्तुत की गयी है, और अंत में समस्या से जूझने का मार्ग एवं कुछ हद तक समाधान जुटाने की भी कोशिश की गयी है। इस संदर्भ में डा. प्रकाश जाधव कहते हैं, " ---- "पोस्टर" में आदिवासी मजदूर जाग उठा है। आदिवासी नारी जाग उठी है। आदिवासियों की आत्मा जाग उठी है। "पोस्टर" के कर्तव्यशील मजदूर अपने अधिकार माँगते हैं, जो कई वर्षों से उनसे छिने गये हैं। कर्तव्यशील नारी अपनी इज्जत और प्रेम माँगती है। कर्तव्यशील आत्मा सबका सुख माँगती है।" [१३] इसी में पोस्टर की सफलता है कि वह अधिकारों की चेतना मजदूरों में जागृति पैदा करती है, जिससे वे संघर्ष का हथियार लेकर समस्या को निपटाने के लिए सक्रीय बन जाते हैं।

३.६ <u>नारी समस्या</u> :

प्रस्तुत नाटक में अन्य समस्याओं की भाँति नारी शोषण

की समस्या भी उजागर हुअी है। नाटककार का कौशल यह है, कि केवल एक-दो दृश्यों के माध्यम से ही नाटककारने इस समस्या की जड़ तक पहुँचने का प्रयास किया है। नारी शरीर के शोषण का वास्तव स्वरूप केवल एक दो दृश्यों से, फिर भी गहराई से प्रस्तुत किया है।

चाहे नारी शिक्षित हो या अनपढ़, वह आधुनिक हो या आदिवासी, उनकी समस्याएं घूम-फिरकर एक ही बिंदु पर आकर थम जाती हैं, और वह है पुरुषवर्ग की एकाधिकार सत्ता, जिसकी दबावनीति में नारी युग-युग से पिसती चली आ रही है। पुरुष की भाँति ही नारी भी भारतीय समाज का एक अभिन्न अंग है। पुरुष और नारी दोनों ही समाज के क्रियाशील अंग है। अत: दोनों के सामाजिक अधिकार, स्वायत्तता, व्यवहार आदि में समानता होनी चाहिए, किंतु ये सभी आदर्श, मूल्य केवल ग्रंथो की शोभा बने हुए हैं।

कोई भी व्यक्ति पहले इन्सान होता है, बाद में स्त्री अथवा पुरुष, किंतु भारतीय समाज नारी के प्रति इन्सानियत की दृष्टि न रख भोगवादी दृष्टि रखता है। उसे इस्तेमाल की चीज मानकर उसका शोषण किया जाता है। युग युग से नारी पुरुष की भोग्या बनकर अपने स्वतंत्र अस्तित्व को, व्यक्तित्व को पुरुष की दासता में कुचलती, मिटाती आ रही है। इस शोषण नीति के लिए जिम्मेदार है, पुरुष वर्ग की वासनांधता एवं नारीत्व के प्रति हीन दृष्टिकोण। नारी के प्रति समाज का दृष्टिकोण ही निम्नस्तरीय रहा है, भोगवादी रहा है। उसे जीवित, मन-भावना संपन्न नारी न मानकर इस्तेमाल का घिनौना रूप दिया गया है। डा. शेष नारीत्व की इस यथार्थ सामाजिक स्थिति में परिवर्तन की आवश्यकता महसूस करते हैं। आदिवासी प्रदेश की नारी समस्या को डा.शेष ने वास्तव धरातल पर प्रस्तुत किया है।

नाटक की प्रधान स्त्री पात्र चैती, जो कल्लु की नवोढ़ा पत्नी है, नारी समस्या का प्रतिनिधि पात्र बनकर नाटक में प्रस्तुत होती है।

पटेल जो आदिवासी प्रदेश का सर्वेसर्वा है, आदिवासी नारियों के प्रति पाशवी व्यवहार करता रहता है। आदिवासी युवतियों से वह अपनी वासनापूर्ती का प्रयास करता है। अफसरों को अपनी मुठ्ठी में रखने के लिए आदिवासी औरतों को उनके भोग के लिए लगा देता है। नाटक में पटेल का निम्न कथन इस संदर्भ में दृष्टव्य है। "----- मैंने एक लेख रखी है। साफ-सुथरी है ------ बोलने-चालने में ठीक है। लेकिन जानवर को पालतु बनाने में वक्त लगता है ----- तो ये औरत ठहरी ---- मुझपे छोड़िये--" १५

जाहिर है, कि जो समाज के रक्षक हैं, वेही आज भक्षक बन गए हैं। जो अफसर आदिवासी प्रांत के विकास के लिए, रक्षा के लिए, सुधार के लिए नियुक्त किए जा चुके हैं, वे ही असल में गुनहगार हैं, दगाबाज हैं। पैसाप्राप्ति, सत्तालोलुपता एवं वासनांधता में ये प्रशासक अपना धर्म, निजी कर्तव्य भी भूल गए हैं। आदिवासी प्रदेश की निरीह नारी जो अज्ञानी है, अबला है, शोषकवर्ग के शोषण का शिकार बनती आयी है। चाहे वह चैती हो, अथवा सुखलाल की पत्नी हो। दोनों की समस्याएं एक ही हैं। आदिवासी प्रदेश में आज भी इस प्रकार के अत्याचार खुले आम चलते रहते हैं, क्योंकि जहाँ पुलिस व्यवस्था, प्रशासन व्यवस्था ही शोषक वर्ग की दासता में पनप रही हो, क्रितदास बन गयी हो, सुविधा भोगी बन गयी हो, वहाँ अकेली नि:सहाय नारी केवल आहें भरने के सिवाय, क्या कर सकती है?

पटेल आदिवासी युवतियों के प्रति वासनासक्त है। उसकी बूरी नजर चैती पर है। अत: वह कल्लु को मुकादम बना कर चैती की ड्यूटी हवेली में लगा देता है। कल्लु जब इस सेवाजेष्ठता का मतलब समझ जाता है, तब वह मुकादम पद को त्याग देता है, और 'पोस्टर' के माध्यम से मूक क्रांति का आरम्भ करता है। चैती भी हवेली पर जाने से साफ इन्कार कर देती है। पटेल जब इसी वजह से कल्लु को कोड़े से पिटवाता है, तो चैती उसके मुँह पर थूकती है। पटेल भड़क उठता है और कहता है, "---- अब तो

हवेली जायेगी ---- सीधे नहीं जायेगी तो मेरे आदमी उठा के ले जायेंगे तुझको ----- कुतिया बना के न छोडा तो मेरा नाम भी पटेल नहीं ! "[१५] अंत में चैती वहीं पहुँचा दी है, जहाँ उसकी नियति थी। अर्थात सुरक्षा व्यवस्था के अभाव में एवं शासनसत्ता की निष्क्रियता से आज भी आदिवासी युवतियों की इज्जत खुले आम पाशवीयता से नीलाम हो रही है। उनकी निरीह जिंदगियाँ तबाह हो रही हैं।

नाटक के आरम्भ में ही इस नारी समस्या पर प्रकाश डाला गया है। ब्रह्मनिरूपण में रुकावट पैदा करनेवाला युवा सत्यस्थिति पर प्रकाश डालता है। वह बलात्कार की घटना को स्पष्ट करते हुए कहता है कि पिछले साल इस मंदिर के पिछवाड़े में एक सत्ताधारी व्यक्ति ने गरीब युवति पर खुलेआम बलात्कार किया था। वह युवा उस बेबस युवति की मदद नहीं कर सका, क्योंकि बलात्कारी उसे जान से मार डालने का भय दिखाता है। वह अनाचारी धमकाता भी है "------ खबरदार ! जबान खोली तो ----- टुकडे टुकडे करके लाश तालाब में डाल दूंगा ---- तेरी जात के हर आदमी का घर जला दूंगा ----- जमीन से बेदखल करा दूंगा--"[१६] लडकी का बाप भी पाँच सौ रूपिये और तीन एकड जमीन के लालच में तथा जान से मार डालने के भय से खामोश हो जाता है। ऐसे समय वह बेबस लडकी घुट घुटकर मरने के सिवाय कर ही क्या सकती है ?

यहाँ नाटककार नारी समस्या की यथार्थ स्थिति केवल एक दो दृश्यों के माध्यम से ही उद्घाटित करता है कि क्या नारी केवल पुरुष की भोगवस्तु है ? जनतंत्र में, आधुनिक युग में भी नारीत्व पर खुले आम अत्याचार, उनका शोषण क्या हमें असंस्कृतता एवं पाशवीयता की ओर नहीं ले जाता ? डा. शेष ने यहाँ सूक्ष्मता से इस समस्या पर प्रकाश डाला है, और उसमें परिवर्तन की एवं सभ्यता की आवश्यकता सूचित की है।

३.७ भ्रष्टाचार की समस्या :

भ्रष्टाचार का सीधा सरल अर्थ है, भ्रष्ट आचार अर्थात व्यक्ति का ऐसा व्यवहार जो सामाजिक, नैतिक, धार्मिक, नीति-नियमों के खिलाफ हो, जिससे समाज का अहित होता हो, ऐसा व्यवहार भ्रष्टाचार कहलायेगा। जब व्यक्ति इन्सानियत से, कर्तव्य पथ से हटकर सत्ता मोह एवं अर्थ प्राप्ति के लिए गैरव्यवहार करने लगता है, बिना कष्ट किए पैसे लूटने लगता है, तो वह व्यक्ति भ्रष्टाचारी बन जाता है। वर्तमान स्थिति यह है कि आज भ्रष्टाचारियों की संख्या दिन-ब-दिन बढ़ रही है। भ्रष्टाचार एक सभ्यता बन गयी है। आधुनिकता के नाम पर इसकी जड़ें अधिक मजबूत होती जा रही हैं। देहात से लेकर महानगरों तक एवं उपर से लेकर नीचे तक सभी प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष रूप से भ्रष्टाचार से जुड़े हुए हैं। कोई प्रत्यक्ष भ्रष्टाचार करता है, तो कोई उसे बढ़ाने में, बनाये रखने में मदद करता है। भ्रष्टाचार की समस्या वर्तमान युग की न मिटनेवाली समस्या है।

भ्रष्टाचार मूलत: अर्थ-क्षेत्र से जुड़ा हुआ है। पैसा मनुष्य की अनिवार्य आवश्यकता है। पैसे के बिना व्यक्ति आज जीवन-यापन नहीं कर सकता। अत: जिंदगी ठीक-ठाक से बसर करने के लिए रुपिया कमाना, बनाये रखना आवश्यक है, किंतु जब व्यक्ति मेहनत का सरल, नेक रास्ता छोड़कर, बिना कष्ट उठाये, गलत रास्ते से पैसे हडप करने लगता है, तो वह भ्रष्टाचारी बन जाता है। बिना कष्ट पैसे कमाने की प्रवृत्ति आज सुशिक्षित लोगों में अधिक मात्रामें बढ़ती जा रही है। भ्रष्टाचार एक ऐसी संसर्गजन्य बीमारी है, जिससे वर्तमान भारत का कोई भी क्षेत्र पाक नहीं रह सका है। भारत का आदिवासी प्रांत भी इसके लिए अपवाद नहीं है। प्रस्तुत नाटक में डा. शेष ने आदिवासी प्रदेश में चलनेवाले भ्रष्टाचार के स्वरूप को उजागर किया है।

आदिवासी प्रांत की विभिन्न समस्याएं न मिटने की जड़ यह

भ्रष्टाचार की समस्या है, क्योंकि अर्थ एवं सुखसुविधा का मोह व्यक्ति को कर्तव्यपथ से हटा देता है। पैसा एवं विलासिता के सामने व्यक्ति मनुष्यता के पद से भ्रष्ट होने की अधिक संभावना रहती है, और जहाँ उस संभावना के लिए सभी ओर से अनुकूल वातावरण हो, तो वह संभावना वास्तव घटना में परिवर्तित हो जाती है। नाटक का खलनायक पटेल एक ऐसा ही भ्रष्टाचारी व्यक्ति है, जो अपनी सत्ता-संपत्ति बनाये रखने के लिए रिश्वतबाजी एवं भ्रष्टाचार को साधन रूप में इस्तेमाल करता है। केवल एक रूपिया मजदूरी पर वह आदिवासी मजदूरों से जंगल से हर्रा, बहेड़ा, आँवला गोंद, चिरौंजी आदि इकठ्ठा कर उनकी छँटाई एवं सफाई का काम करवाता है। बाद में वह साफ सुथरा माल शहर भिजवाकर लाखों का मुनाफा वह अकेले ही हडप करता है। अपनी इस एकाधिकार मनमानी को बनाये रखने के लिए वह सरकारी अफसर, पुलिसयंत्रणा, न्यायव्यवस्था, नेतागण आदि को रिश्वत देता रहता है। उन्हें खुश रखने के लिए वह विलासिता के सभी साधन जुटाता रहता है। विलायती महँगी शराब, मांसाहार, उँची दावतें तथा उनके भोग के लिए आदिवासी औरतें भी उनके पास पहुँचाता रहता है। अत: उसके भ्रष्ट व्यवहारों पर किसी का भी अंकुश नहीं रहता है। निरीह जनता का सभी ओर से हो रहा शोषण देखकर उसे रोकने की, उसे नष्ट करने की कोशिशश नहीं की जाती। अत: ऐसी हालत मे भ्रष्टाचार का स्वरूप अधिक भयंकर बनता जा रहा है। नाटक का निम्न संवाद इस तथ्य की पुष्टि कराता है। " ..... बताओ नहीं बताओगे .... अरे मैं हर घर की तलाशी करवाउँगा। ऊपर तक जाऊंगा .... समझते क्या हो! पूरे गांव में आग लगवा दूंगा ..... हरामजादों ! अभी तक तुम लोगों ने मेरी ताकद नहीं देखी है। ये टुकडखोर अफसर साले मेरी मुठ्ठी में हैं .... क्या समझे।"[१७] जहाँ सुरक्षा व्यवस्था, प्रशासन व्यवस्था ही भ्रष्ट हो, वह सत्ताधारी शोषक वर्ग की गुलामी में पनप रही हो, वहाँ न्याय की संभावना भी नहीं की जा सकती।

आज भ्रष्टाचार ने पूरा क्षेत्र ग्रस लिया है। धनिक वर्ग सत्ताधारी वर्ग अधिक धनवान बनते जा रहे हैं। सभी ओर अराजकता मची हुई है। धनिकवर्ग की बेबंद तानाशाही में बेचारी जनता पिसती जा रही है। अज्ञान के कारण न वे कुछ समझ सकते हैं, और न कोई ठोस कदम उठा पाते हैं। शोषण की खाई में उनका निरीह जीवन तबाह हो रहा है।

आज व्यक्ति भोगवादी तथा ऐशोआरामी बन गया है। बिना कष्ट किए वह फल की कामना करता है। झट से अमीर बनने के लिए भ्रष्ट मार्ग अपनाता है। 'पोस्टर' का खलनायक पटेल, फॉरेस्ट अफसर, नेतागण, पुलिसव्यवस्था सभी इसमें शामील हैं। भ्रष्टाचार की यह प्रवृत्ति इनमें रक्तबीज की तरह फैलती जा रही है। भ्रष्टाचार के इस रक्तबोज को जड़-सहित उखाड़ने के लिए आत्मिक संस्कार एवं मन परिवर्तन करनेवाली शिक्षा की जरूरत है। केवल नियम बनाने से या कानून की ताकद से यह समस्या मिट नहीं सकती। उसके लिए अंतरूनी शिक्षा, संस्कार एवं नेक कृतिशीलता ही उपयोगी साबित हो सकती है।

३.८ कानून की समस्या :

कानून का जनम् जीवन के दु:ख-दैन्य को दूर करके उसे सुखी एवं स्वस्थ बनाने के लिए हुआ है। मनुष्य ने सामाजिक सुखशांती के लिए अपने आप पर जो बंधन लादे हैं, वे ही कानून कहलाते हैं। समाज को बाँधने के लिए कानून की आवश्यकता होती है। मानवी जीवन की विविध समस्याएँ, सत्य एवं न्याय के धरातल पर सुलझाकर मानवी जीवन सुखी बनाना कानून का उद्देश्य रहा है। इस दृष्टि से मानवी जीवन में कानून का स्थान अत्याधिक महत्त्वपूर्ण एवं आवश्यक रहा है।

समाज जीवन में स्थित अन्याय, गुनहगारी को रोककर उसे विधायक कार्य की ओर प्रवृत्त करना कानून का प्रधान धर्म है। अर्थात् स्वस्थ मानवी जीवन की प्रतिष्ठापना के लिए कानून की व्यवस्था की गयी है।

अक्सर यह देखा गया है, कि सत्ताधारी पैसे के बल पर एवं ताकद के बल पर न्यायव्यवस्था को खरीद लेते हैं, और न्यायव्यवस्था भी अन्याय एवं अत्याचार को मिटाने के बजाय उनका साथ दे रही है। धन के लालच में अपना निजी धर्म भूल रही है। सत्ता-संपत्ति के मोह में कानून अंधा बनता जा रहा है। अन्याय को न्याय में एव असत्य को सत्य में परिवर्तित करने की कोशिश की जाती है। ऐसी स्थिति में स्वस्थ समाजजीवन के लिए कानून का पालन अत्यंत आवश्यक बन गया है।

डा. शंकर शेष ने 'पोस्टर' में आदिवासी प्रांत की अन्याय एवं अत्याचार में पिस रही निरीह जिंदगियाँ चित्रित करते हुए उसके पीछे जिम्मेदार समाजकंटक प्रवृत्तियों पर भी प्रकाश डाला है। डा. शेष इस विषम स्थितियों के पीछे कानून व्यवस्था की निष्क्रीयता अप्रत्यक्ष रूप से सूचित करते हैं, क्योंकि समाज की स्वस्थता के लिए कानून बना है, कानून के लिए समाज नहीं। जहाँ-जहाँ समाजजीवन में अन्याय का अतिरेक बढता जाता है, सत्य एवं न्याय को सत्ता एवं ताकद के बल पर कुचल दिया जाता है, वहाँ-वहाँ कानून को खुद जाकर उसे मिटाने की कोशिश करनी चाहिए, क्योंकि आदिवासी प्रांत के सामान्य मजदूर अज्ञानी है, अनपढ़ है, अत: वह खुद इस न्यायव्यवस्था से अनजान है, दूर है। जहाँ जमींदार वर्ग की तानाशाही में मजदूर वर्ग का शोषण होता है, उनका सम्पूर्ण जीवन अर्थ एवं शिक्षा के अभाव में पशुतुल्य रहा हो, आदिवासी युवतियों की जवानी खुले आम धनिक वर्ग की रखैल बन गयी है, वहाँ कानून की निष्क्रीयता बहुत ही लज्जास्पद एवं अवमानास्पद बात है। ऐसी स्थिति में तो कानून की सर्वाधिक आवश्यकता रहती है।

'पोस्टर' के आरंभ में कीर्तन में व्यत्यय निर्माण करनेवाला युवा इस स्थिति को उजागर करता है, कि सत्ता एवं पैसे के बल पर हुए बलात्कार भी किसप्रकार रफा दफा किए जाते हैं। आदिवासी प्रांत में भी सत्ता संपत्ति के लालच में अधिकारी वर्ग, पुलिस वर्ग, जिनकी व्यवस्था पिछड़े

जनजीवन की सुरक्षा एवं सुधार के लिए की गयी है, वे ही अत्याचारी हैं। वे ही अन्याय को जीवित रखने में उसे बढ़ाने में हिस्सा ले रहे हैं। इस विषय, अन्याय्य परिस्थिति के लिए, वे ही सर्वाधिक जिम्मेदार हैं। इस वर्तमान स्थिति को बदलाने के लिए, आदिवासी प्रांत के अन्याय, अत्याचार को मिटाने के लिए, उसके लिए जिम्मेदार शासकीय यंत्रणा, पुलिस यंत्रणा, जमींदार आदि को उचित शासन देकर उन्हे सही रास्ते पर लाने के लिए तथा आदिवासी प्रांत की हिफाजत के लिए न्याय्य कानून व्यवस्था की सर्वाधिक आवश्यकता है। नाटक में प्रत्यक्षत: कानून की समस्या नहीं आती, किंतु आदिवासी प्रांत की विभिन्न समस्याएं मिटाने के लिए कानून एक प्रभावी साधन है, जिसकी आवश्यकता डा.शेष सूचित करते हैं।

३.९ निष्कर्ष :

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि 'पोस्टर' में डा.शेष ने आदिवासी प्रदेश के पिछड़े जनजीवन को मूर्त किया है। 'पोस्टर' की सारी समस्याएं आदिवासी परिवेश के अंग रूप में नाटक में प्रस्तुत होती हैं। नाटककार ने आदिवासी परिवेश की समस्यामूलक स्थिति को जडसहित स्वाभाविकता से प्रस्तुत किया है। ये सभी समस्याएं वहाँ की विषम परिस्थितियों को पाठक के सामने उजागर करती हुअी, उसे चिंतनशील बनाती हैं।

'पोस्टर' युग-युग से पीड़ित, दलित, शोषित आदिवासी जीवन की यथार्थ अभिव्यक्ति है। वह आदिवासी परिवेश के दाहक वास्तव को उजागर करता है। अन्याय, अत्याचार से सना जंगली परिवेश, शोषक वर्ग द्वारा आदिवासी नारीत्व पर हो रहे अत्याचार, आदिवासी मजदूरों का हो रहा सामाजिक, नैतिक अधिकारों का शोषण, आर्थिक शोषण नाटक में यथार्थता से प्रस्तुत है। पटेल के शोषणतंत्र का शिकार बने हुए ये बेबस आदिवासी, अज्ञान के कारण उनकी हुअी दयनीय हालत पाठक के मन को झकझोर देती है।

शोषकवर्ग की क्षुद्र स्वार्थनीति समाज में आर्थिक विषमता की दरारें पैदा करती है। अर्थ का असमान बँटवारा ही समाज की विभिन्न समस्याओं जड़ रहा है, जिसे डा. शेष ने 'पोस्टर' में यथार्थ दृष्टि से प्रस्तुत किया है। आदिवासियों के पिछड़ेपन तथा शोषण का प्रधान कारण है, उनका अज्ञान एवं बेबसी, जिसकी वजह से वे वास्तवता से बेखबर शोषकवर्ग की शोषणनिति का शिकार बन रहे हैं। अंधश्रध्दा का भूत उनके मन मस्तिष्क पर सवार है। उनकी यही स्थिति शोषक वर्ग की तानाशाही को अवसर प्रदान करती है। इसी अज्ञान के कारण शोषक वर्ग, धर्म के नाम पर पाप-पुण्य की कल्पनाएं, अंधश्रधाएं अशिक्षित जनता में फैलाकर अपना उल्लु सीधा करते हैं। वर्तमान समय में धर्म का हो रहा अवमूल्यन, धर्म के नाम पर शोषक वर्ग की बढ़ती हुअी शोषणावृत्ती, स्वार्थनीति डा.शेष ने यहाँ बारीकी से प्रस्तुत की है।

उच्च धनिक वर्ग किसप्रकार विभिन्न हथकंडे अपनाकर अपनी शोषणानीति को बनाये रखता है, इसका वास्तव चित्र 'पोस्टर' के पटेल द्वारा डा. शेष ने प्रस्तुत किया है। अपनी स्वार्थनीति को बनाये रखने के लिए शोषक वर्ग की मनमानी एवं मजदूर वर्ग का शोषण आज आम बात हो गयी है। शोषक वर्ग की भ्रष्ट नीति में पनप रही प्रशासन व्यवस्था एवं पुलिस वर्ग की कर्तव्य हीनता को दूर करने के लिए न्याय कानून व्यवस्था की सक्रीयता आवश्यक है। साथ ही आदिवासी जनता का शिक्षित एवं समझदार बनना भी अनिवार्य है, तभी जाकर वे इन कठिण समस्याओं से लोहा ले सकते हैं। संघर्ष एवं संघशक्ति के मार्ग से सुखी एवं प्रगतिशील बन सकते हैं।

इसप्रकार 'पोस्टर' में आदिवासी प्रांत की समस्याएं अपने मूल रूप में प्रस्फुटित हुअी है। डा.शेष इन समस्या निर्मिति के कारणों पर प्रकाश डालते हुए उसके भीषण स्वरूप को भी उजागर करते हैं। अंत में डा. शेष ने इसे दूर करने के लिए समस्या का समाधान भी जुटाने की कोशिश की है। राघोबा जैसे समाजसुधारकों का कुशल एवं प्रभावी नेतृत्व, मजदूरों

की संघशक्ति, एकता की भावना, न्याय्य अधिकारों की प्राप्ति के लिए संघर्ष-शील वृत्ति डा. शेष ने यहाँ स्वाभाविकता से एवं वास्तव धरातल पर प्रस्तुत की है। नाटककार का यह प्रयास निश्चय ही प्रेरणादायी रहा है। इस प्रकार 'पोस्टर' में डा. शेष ने आदिवासी प्रांत की विभिन्न सामाजिक समस्याओं का चित्रण किया है।

संदर्भ

१. डा. श्रीपति त्रिपाठी - हिंदी नाटकों पर पाश्चात्य प्रभाव-पृ.क्र. १८८

२. मान्धाता ओझा - हिंदी समस्या नाटक - पृ.क्र. ३४

३. डा. शंकर शेष - पोस्टर - पृ.क्र. ११३

४. वही - पृ.क्र. ११५

५. वही - पृ.क्र. ११२

६. डा. प्रकाश जाधव - रंगधर्मी नाटककार शंकर शेष - पृ.क्र. ८५

७. डा. शंकर शेष - पोस्टर - पृ.क्र. ९१

८. डा. नरनारायण राय - नाटकनामा - पृ.क्र. १८७

९ डा. सुरेश गौतम, डा. वीणा गौतम - राजपथ से जनपथ: नटशिल्पी शंकर शेष - पृ.क्र. १५८

१०. डा. शंकर शेष - पोस्टर - पृ.क्र. १२१

११. वही - पृ.क्र. ८६

१२. डा. सुरेश गौतम, डा. वीणा गौतम - राजपथ से जनपथ: नटशिल्पी शंकर शेष- पृ.क्र. १६१

१३. डा. प्रकाश जाधव - रंगधर्मी नाटककार शंकर शेष - पृ.क्र. ९०

१४. डा. शंकर शेष - पोस्टर - पृ.क्र. १७०

१५. वही - पोस्टर - पृ.क्र. १७७

१६. वही - पोस्टर - पृ.क्र. ९३

१७. वही - पोस्टर - पृ.क्र. १४७